E-ISSN: 2706-8927
P-ISSN: 2706-8919
Impact Factor: RJIF 5.12
IJAAS 2020; 2(1): 357-363
Received: 25-11-2019
Accepted: 29-12-2019

Poonam Saini
Research Scholar
Shri JJT University Chudela
Jhunjhunu, Rajasthan, India

Corresponding Author:
Poonam Saini
Research Scholar
Shri JJT University Chudela
Jhunjhunu, Rajasthan, India

कृषि कारकों का मानव स्वास्थ्य व पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभावो का विश्लेष्णात्मक अध्ययन

Poonam Saini

DOI: https://doi.org/10.33545/27068919.2020.v2.i1f.859

प्रस्तावना

कृषि पारिस्थितिकी में हरित क्रान्ति के आगमन के कारण अनेक कृषि यंत्र, खाद और उन्नत बीजों के साथ–साथ कीटनाशक दवाओं का आगमन भी हुआ है। जब किसानों ने यह महसूस किया कि प्रारम्भिक अवस्था में अच्छी फसल खड़ी होने के बावजूद अन्न उत्पादन कम कैसे हुआ, तो उन्होने पाया कि कृषि भूमि एवं पादप शारिरिकी में अनेंक हानिकारक सूक्ष्म जीव जैसे फफूंद, जीवाणु, वायरस, माईक्रोप्लाज्मा, निमेटोडस आदि का प्रकोप बढ़ रहा हैं। ये सूक्ष्म जीव मृदा के तापमान, उसकी जल ग्रहण क्षमता, पोषकता तथा लवणता को परिवर्तित करके उसे कृषि के प्रतिकूल बना देते हैं। फलस्वरूप मृदा की उर्वरक शक्ति घट जाती है जिससे फसलो में अनेक प्रकार की व्याधियाँ उत्पन हो जाती है। और फसल उत्पादन घट जाता है। अतः इन व्याधियों को नियंत्रित करने हेतु जीवाणुनाशक औषधियाँ काम में ली जाने लगी जिनमे बी.एच.सी. कारवोरिल, साइपर मैथेरीन एवं फेनेवलेनेट (कपास हेतु) डाईक्लारस, डी.डी.टी. कीपेथीऐट एण्ड ओ.एस. अल्फान, फैनिटोथियान, मैलाथियान, फोसफोमिडान, स्ट्रेप्टोसाइक्लिन, थाइरम, मैन्कोजेब, कार्बेण्डेजिम कॉपर सल्फेट, कॉपर आक्सेक्लाराइड, कारबेन्डाजीम, मानेओजाम, सल्फर जीनाब एवं आयतित डी फोलेशन एवं डाईनोकेप आदि दवायें मुख्य है। इन औषधियों को चूर्ण के रूप में अथवा पानी मे मिलाकर बने घोल के रूप में छिड़कर उपयोग कीया जाता है। छिड़काव हेतु स्पेयर अथवा डस्टिंग मशीन का इस्तेमाल करते हैं। चूँकि यह विधि फसलो को कीटो से बचाती है अतः इसका अधिकाधिक प्रयोग कीया जा रहा हैं। लेकिन इन रसायनो का कृषि पारिस्थितिकी पर हानिकारक प्रभाव हो रहा है। जब हम इन कृषि उत्पादो को खाते है तो ये विषेले रसायन हमारे शरीर में पहुँचकर अनेक विकार उत्पन करने के साथ साथ कृषि पारिस्थितिकी में उपयोगी सूक्ष्म जीवों को मार देती है।

पर्यावरण तथा मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कुछ कृषि कारको को निम्न प्रकार सारणीबद्ध किया जा सकता है :–

कारक	स्त्रोत	प्रभाव
कीटाणुनाशक	कृषि उद्योग	जल एवं मृदा प्रदूषण
उर्वरक	कृषि उद्योग	जल एवं मृदा प्रदूषण
खरपतवार नाशक	कृषि उद्योग	जल एवं मृदा प्रदूषण
दूषित सिंचित जल	कृषि एवं मानव अपशिष्ट	जल एवं मृदा प्रदूषण
कृषि संयंत्र	कृषि उद्योग	जल, मृदा व ध्वनी प्रदूषण
कृषि अवशिष्ट पदार्थ	कृषि उद्योग	जल एवं वायु प्रदूषण
विधुत जनरेशन संयंत्र	कृषि उद्योग	तापीय एवं जल प्रदूषण
केडमियम(Cd)	कीटनाशक	जल एवं मृदा प्रदूषण
सीसा(Pb)	कीटनाशक	जल एवं मृदा प्रदूषण
पारा(Hg)	जल में घुलकर खाद्य श्रृखला में प्रवेश	जल एवं मृदा प्रदूषण
सुपोषण(यूट्रोफिकेशन)	अत्यधिक उर्वरक	जल एवं मृदा प्रदूषण
मिथाइलआईसोसाइनेट	कीटनाशक	जल, मृदा एवं वायु प्रदूषण
अम्लीय वर्षा	SO_2, NO_2	जल एवं मृदा प्रदूषण
ताप(ग्लोबल वार्मिग)	कृषि अपशिष्ट, उद्योग एवं ग्रीन हाउस गैसे	तापीय प्रदूषण
आर्सेनिक(As)	कीटनाशक	जल, मृदा एवं वाय प्रदूषण
कार्बनमोनोऑक्साइड (CO)	कृषि अपशिष्ट का अपूर्ण दहन	वायु प्रदूषण
कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2)	कृषि अपशिष्ट का पूर्णदहन	ग्लोबल वार्मिग
फ्लोराइड (F^-)	रॉकफास्फेट नामक रसायन	उतकक्षय,हरिमाहीनता, फ्लोरोसिस
सल्फरडाइऑक्साइड (SO_2)	कृषि अपशिष्ट एवं रसायन	अम्लीय वर्षा
ईथाइलीन(C_2H_4)	कीटनाशक	कपास वं आर्किड में समय से पूर्व पत्तियों का झड़ना

कृषि कारको का मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव

1. **कार्बनमोनोऑक्साइड (CO) -** कृषि अपशिष्ट के अपूर्ण दहन से मुक्त बव हिमोग्लोबिन से जुड़कर कार्बोक्सीहीमाग्लोबिन बनाता है जिसके कारण रक्त की ऑक्सीजन वहन करने की क्षमता कम हो जाती है । जिसके फलस्वरूप सिरदर्द, दृष्टिविकार, मॉसपेशियों की कमजोरी, जी मचलाना, थकावट आदि विकार उत्पन्न हो जाते है। कभी–कभी 50ः हीमोग्लोबिन की मात्रा कार्बोक्सीहीमाग्लोबिन में बदल जाती है, जिससे शरीर में ऑक्सीजन की पूर्णतः कमी होने से श्वास प्रक्रिया अवरूध हो जाती है और व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है ।
2. **कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) -** यह प्रमुख ग्रीनहाऊस गैस है जो कृषि अपशिष्टो के पूर्ण दहन से मुक्त होती है जिसकी बहुत अधिक मात्रा के कारण ग्लोबलवार्मिग होता है, जिससे मानव में चर्मरोग, एलर्जी, दमा एवं श्वास संबंधी बिमारियां उत्पन्न हो जाती है ।
3. **सल्फरडाईऑक्साइड (SO_2) - यह** अम्लीय वर्षा का मुख्य घटक है, जिसके कारण मनुष्य में दमा एवं फेफड़ों संबंधी रोग, ऑखों में जलन एवं श्वासनली को क्षति होती है। उदा. –अमोनियम थायोसल्फेट उर्वरक।
4. **हाइड्रोकार्बन –** कृषि संयंत्रों में उपयोग होने वाले ईंधन के दहन से उत्पन्न होते है। ये कार्सिनोंजेनिक होते है जो ऑखों और श्लेष्मा झिल्ली में जलन पैदा करते है।
5. **नाइट्रोजनऑक्साइड** – यह आंखों में जलन पैदा करती है एवं फेफड़े, जिगर, वृक्क आदि को नुकसान पहुँचाते हैं एवं धमनियों को फैलाती है।
6. **फ्लोराइड –** यह फास्फेट उर्वरको के साथ संयुक्त अवस्था में रहता है तथा फ्लोरोसिस नामक बिमारी उत्पन्न करता है जिसके कारण दाँतों की मोटलिंग, अस्थियों में कमजोरी, घुटनों की कमजोरी आदि रोग उत्पन्न हो जाते है।
7. **कणिकीय पदार्थ –** कपास की धूल, अनाज की धूल, गन्ने की धूल आदि कणिकीय पदार्थों के वायु में मिलने से अनेक श्वसन संबंधी रोग जैसे–न्यूकोनिओसिस, बिसिनोसिस(कपास धूल के कारण), कृषक फुफुस रोग(अनाज की धूल के कारण) आदि उपन्न हो जाते है।
8. **पारा (Hg)** – कृषि रसायनों में कीटनाशी के रूप मे प्रयुक्त मर्करी खाद्य श्रृखला में प्रवेश करके मनुष्यों तक पहुँच जाती है जिससे मानव की इन्द्रियां कमजोर हो जाती है, दस्त, हिमोलाइसिंस एवं कभी–कभी मृत्यु भी हो जाती है। इस रोग को मिनिमाटों रोग कहते है। यह कैल्शियम सुपर फास्फेट नामक रसायन के साथ संयुक्त अवस्था में पाया जाता हैं।
9. **सीसा (Pb)** – लैड आर्सेनेट, लैड हाइड्राजन आर्सेनेट नामक कीटनाशकों में प्रयुक्त सीसा खाद्य श्रृंखला के माध्यम से मनुष्य के शरीर में पहुँचकर अनेक बिमारियां जैसे– सिरदर्द, खून की कमी, उल्टी, पेटदर्द, मांसपेशियों में कमजोरी, मसूड़ों के पास नीली रेखा, भूख न लगना, जिगर खराब होना एवं गुर्दा और दिमाग की कमजोरी आदि व्याधियां उत्पन्न हो जाती है ।
10. **कैडमियम (Cd)** – कैडमियम भी कीटनाशकों में प्रयुक्त होता है जो ब्रद्ध के साथ संयुक्त अवस्था में रहकर खाद्य श्रृंखला से होकर मानव शरीर में पहुँच जाता है तथा अनेक अंगो जैसे–गुर्दा, जिगर, तिल्ली आदि में एकत्रित होकर उच्च रक्तचाप,खून की कमी, दस्त आदि व्याधियां उत्पन्न करता है।
11. **डी.डी.टी –** यह एक कीटनाशी है जो केन्द्रिय तंत्रिका तंत्र को प्रभावित करके उच्च रक्तचाप, जिगर का कैन्सर(यकृत सिरहोसिस), जननांगों के विकास में रूकावट पैदा करता है। इसका पूरा नाम डाइक्लोरो डाइफेनिलट्राइक्लोरोएथेन हैं।
12. **उर्वरक** – मृदा में डाले गये नाइट्रोजनी उर्वरक जैसे कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट आदि वनस्पति में नाइट्रेट की सान्द्रता बढ़ा देते है । जब ये नाइट्रेट खाद्य पदार्थों के रूप में मानव की आहारनाल मे पहुँचते हैं तो आहार नली में उपस्थित जीवाणुओं द्वारा इन्हें नाइट्राइट में परिवर्तित कर दिया जाता है। यह नाइट्राइट रक्त में मिल जाते है और हीमोग्लोबिन से जुड़कर मैथहीमोग्लोबीन बनाते है। जो निम्न प्रकार व्याधियां उत्पन्न करता है :–

- मैथहीमोग्लोबीन के कारण मनुष्य में ऑक्सीजन का परिवहन कम हो जाता है जिससे मैथहीमोग्लोबीनिमिया नामक रोग उत्पन्न हो जाता है।
- नवजात शिशुओं में यह साइनोसिस (ब्लू बेबी सिन्ड्रोम) नामक रोग उत्पन्न करता है इस रोग में नवजात शिशु के शरीर में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है, जिससे शरीर नीला पड़ जाता है और शिशु की मृत्यु हो जाती है।

13. **आर्सेनिक (As)** – यह लैड आर्सेनेट, कापर आर्सेनेट आदि कीटनाशी के रूप में प्रयुक्त होता हैं। इसके कारण जी मचलाना, उल्टी, दस्त, रक्त में ॅठब् व त्ठब् को कम करना, हृदय का असामान्य रूप से घड़कना, रक्त वाहिनी की क्षति, हाथ पैर का सुन्न होना आदि समस्याएं उत्पन हो जाती है। इसके अलावा दीर्घकाल तक पेयजल के द्वारा आर्सेनिक त्वचा, फेफडे, जिगर, गुर्दे, मुत्राशय आदि में कैंसर उत्पन्न

कर देता है। तथा साथ ही त्वचा में रूखापन तथा रंग परिवर्तन भी कर देता है।

14. **परागकण** – पुष्पो के पुकेंसर से निकलने वाले परागकण मनुष्य में अनेक प्रकार के चर्म रोग उत्पन्न कर देते है ये मुख्यतः एलर्जी उत्पन्न करते है एलर्जी के अलावा ये फीवर भी उत्पन्न करते है।
15. **मोटी घास** – प्रकृति में पायी जाने वाली मोटी घास में मीथेन(CH_4) गैस पायी जाती है। जब पालतू पशु इस मोटी घास को खाकर जुगाली लेते है तो वे मीथेन गैस मुक्त करते है जिससे मुनष्य को श्वास लेने में दिक्कत होती है।

कृषि का पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव – कृषि कार्यों से पर्यावरण प्रदूषण का खतरा बढ़ता जा रहा है। जिनमें जल प्रदूषण तथा मृदा प्रदूषण मुख्य हैं।

जल प्रदूषण :

''जल है तो जीवन है'' अर्थात जल के बिना जीवन सम्भव नही है। जीवमण्डल में सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व जल है क्योंकि एक तरफ तो यह स्थलमण्डल के सभी जीवों के लिए महत्वपूर्ण तथा आवश्यक तत्व माना गया है तथा दूसरी तरफ यह जीवमण्डल में पोषक तत्व के संचरण तथा चक्रण में सहायता करता है। इनके अलावा भी जल के अनेक उपयोग है जैसे बिजली का निर्माण, नौका परिवहन, फसलों की सिंचाई, सीवेज के निपटान आदि के लिए महत्वपूर्ण है। धरातल पर जल विभिन्न रूपों में पाया जाता है जैसे – भूमिगत जल, सरिता जल, झील जल, समुद्रीय जल आदिं लेकिन समस्त जल का केवल एक प्रतिशत जल ही मनुष्य के पीने योग्य उपलब्ध है। इनमे से भूमिगत जल सबसे अधिक जल प्रदान करता है।

जनसंख्या में तीव्र वृद्धि, औद्योगिकीकरण नगरीकरण के कारण जल की मांग में गुणोत्तर वृद्धि हुई। परिणामस्वरूप जल की गुणवत्ता में भारी गिरावट आयी है। यह माना जाता है कि जल में स्वयं शुद्धीकरण की क्षमता होती है परन्तु जब मानव जनित स्रोतो से उत्पन्न प्रदूषकों का जल में इतना अधिक जमाव हो जाता है कि यह जल की सहनशक्ति तथा स्वयं शुद्धिकरण की क्षमता से अधिक हो जाता है तो जल प्रदूषित हो जाता है। इस जल प्रदूषण में कृषि कारक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है जो निम्न प्रकार है –

1. फसलो को विभिन्न रोगो से बचाने के लिये और अवांछित पौधो को नष्ट करने के लिये खेतों में विभिन्न प्रकार के रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक, शाकनाशी तथा रोगनाशी कृत्रिम रसायनों का छिडकाव किया जाता है और जब वर्षा होती है तो ये रसायन वर्षा जल के साथ बहकर धरातलीय जल में प्रवेश करके उसे प्रदूषित करते है।
2. कृषि में काम आने वाले उपकरण तथा अन्य विभिन्न प्रकार के उपकरणों को बनाने के दौरान उद्योगो तथा कारखानों से बडी मात्रा में विषाक्त पदार्थ जैसे– सीसा, पारा, कैडमियम, जस्ता, एस्बेस्टोस के रेशे तथा कणिकीय पदार्थो आदि को किसी नदी, नाले या तालाब में बहा दिये जाते है जिससे बडी मात्रा में जल प्रदूषित होता है।
3. नाभिकीय संयंत्रो एवं संस्थानो से उत्सर्जित रेडियाऐक्टिव तत्वो से भी जल प्रदूषण होता हैं। अतः ये सभी प्रदूषक अन्य रासायनिक तत्वों से अभिक्रिया करके धरातलीय जल मे अनेक प्रकार के भौतिक एवं रासायनिक परिवर्तन करते है जिस कारण धरातलीय जल ओर भी अधिक प्रदूषित हो जाता है और इस प्रकार से प्रदूषित जल समस्त पादप एवं मानव समुदाय सहित जन्तु समुदाय को बुरी तरह प्रभावित करता है। जिस प्रकार विश्व में नगरीकरण एवं औद्योगीकरण का विस्तार हो रहा है उससे कई प्रकार के जल प्रदूषकों का प्रतिवर्ष निर्माण हो रहा है। जल–प्रदूषण के कारण आज भारत की अधिकांश नदियाँ प्रदूषित हो चूकी है। नदी जल के प्रदूषण के प्रमुख स्त्रोत इस प्रकार हैः–
1. औद्योगिक क्षेत्र तथा प्रतिष्ठान
2. नगरीय क्षेत्र
3. कृषि क्षेत्र
4. मनुष्य के अन्य क्रिया–कलाप

नदियों का प्रदूषण मुख्यतया दो रूपों में होता है–

- प्वाइण्ट या बिन्दू प्रदूषण
- नॉनप्वाइण्ट प्रदूषण

प्वाइण्ट या बिन्दू प्रदूषण

प्वाइण्ट प्रदूषण का अर्थ होता है किसी निर्दिष्ट अवस्थिति से प्रदूषकों का निकलना, जैसे– सीवर नालें का किसी नदी, झील, जलाशयों या सागर में निकास करना, औद्योगिक प्रतिष्ठानों से अपशिष्ट जल व अपशिष्ट पदार्थो का नदियों, जलाशयों तथा झीलों में छोडना, कारखानों की चिमनियों आदि। अतः प्वाइण्ट प्रदूषण के प्रमुख स्त्रोत औद्योगिक व नगरीय क्षेत्र को माना गया है।

नॉनप्वाइण्ट प्रदूषण

नॉनप्वाइण्ट प्रदूषण का प्रमुख स्त्रोत कृषि क्षेत्र है। जब प्रदूषण अनिर्दिष्ट अवस्थिति या स्त्रोत से होता है तो उसे नॉनप्वाइण्ट प्रदूषण कहते है। जैसे– खेतों से रासायनिक उर्वरक एवं अन्य कीटनाशी कृत्रिम रसायन वर्षा के जल के साथ बहकर झीलो जलाशयों या नदियों में जाकर मिलते है तो उनसे होने वाले प्रदूषण को नॉनप्वाइण्ट प्रदूषण कहते है। नॉनप्वाइण्ट प्रदूषण का प्रमुख अभिकर्ता वायुमण्डलीय जल वर्षा से उत्पन्न धरातलीय वाही जल होता है। वर्षा का जल प्रदूषकों का दो दिशाओं में परिवहन करता है–

- धरातल पर बहने वाले जल द्वारा प्रदूषकों का क्षैतिज परिवहन तथा
- अन्तः स्पन्दन करते हुए तथा रिसते हुए जल द्वारा प्रदूषकों का जमीन में नीचे की ओर परिवहन।

अतः स्पष्ट है कि नॉनप्वाइण्ट जल प्रदूषण में सतही जल व भूमिगत जल दोनों को ही सम्मिलित किया जाता है। नॉनप्वाइण्ट जल प्रदूषण हमारे भौतिक पर्यावरण, सतही जल तथा भूमिगत जल व मिटियो में होने वाला विषायण है। इससे मिटियों में प्रदूषण होने से उनकी उर्वरता एवं उत्पादकता में कमी होती है। जिस कारण कृषि उत्पादन में अत्यधिक कमी होने से खाद्यान्न संकट उत्पन्न हो जाता है।

नॉनप्वाइण्ट जल प्रदूषण को भी मुख्य रूप से दो भागों में विभाजित किया जाता हैः–

- ग्रामीण नॉनप्वाइण्ट प्रदूषण
- नगरीय नॉनप्वाइण्ट प्रदूषण
- ग्रामीण नॉनप्वाइण्ट प्रदूषण मुख्यतः ग्रामीण क्षेत्रो में कृषि कार्यो से होता है चूंकि ग्रामीण नॉनप्वाइण्ट प्रदूषण मुख्य रूप से कृषि कार्यो द्वारा ही होता है इसलिये इसे कृषि प्रदूषण भी कहते हैं। ग्रामीण क्षेत्रो में नॉनप्वाइण्ट प्रदूषण के स्वभाव एवं परिमाण को प्रभावित एवं निर्धारित करने वाले प्रमुख कारक निम्न हैंः–
- किसानो द्वारा डाली जाने वाली रासायनिक खाद्य, कीटनाशी, शाकनाशी एवं रोगनाशी कृत्रिम रसायनों की विशेषतायें तथा मात्रा, मिट्टीयों के प्रकार, वर्षाजल की वार्षिक तीव्रता तथा मात्रा, मौसम एवं जलवायु संबंधी अन्य दशाऐं, जुताई के

तरीके तथा कृषि प्रबन्धन की तकनिक, धरातलीय सतह की विशेषताऐं, ढाल, बोई गई फसलों के स्वभाव एवं प्रकार आदि।

- नगरीय नॉनप्वाइण्ट प्रदूषण के स्त्रोत यद्यपि भिन्न होते है इन्हें निम्न श्रेणियों में विभाजित किया जाता है–

1. आवास प्रदान क्षेत्रो से आने वाले प्रदूषक– इन प्रदूषकों की मात्रा उस क्षेत्र में मकानों के धनत्व पर निर्भर करती है।
2. लघुस्तरीय व मध्यम स्तरीय उद्योगों से आने वालें प्रदुषक।
3. वृहद्धस्तरीय उ़द्योगो से निकलने वालें विभिन्न प्रकार के प्रदूषक।
4. कुछ मात्रा में नगरों में भी कृषि की जाती है अतः कृषि क्षेत्र के प्रदूषक।

नदियों के नॉनप्वाइण्ट प्रदूषण का प्रमुख स्त्रोत कृषि क्षेत्र है तथा औद्योगिक व अपशिष्ट पदार्थ भी प्रमुख है। आज भारत की कई नदियॉ पूर्ण रूप से प्रदूषित हो चुकी है जैसे– गंगा नदी, यमुना नदी, नर्मदा, गोदावरी आदि कई महत्वपूर्ण नदियां है। भारत की अधिकांश बडी नदियां आज प्रदूषण के चपेट में है जैसे–गंगा नदी में प्रदूषण

झील प्रदूषणः– अन्य जल प्रदूषणों की भांति झीलों में भी प्रदूषण का प्रमुख कारण प्राकृतिक एवं मानव जनित दोनो ही हो सकता है। पहाडी क्षेत्रो में झीलो में प्रदूषण का प्रमुख कारण यहां होने वाले मृदा अपरदन के फलस्वरूप अवसादों का निक्षेपण है। यह मानव जनित स्त्रोतो से होने वाले झील प्रदूषण का प्रमुख उदाहरण है। झीलों का जल स्थायी होने के कारण अधिक प्रदूषित होता है। झीलों के आस–पास बसे नगर, उद्योग व कारखानों से निकलनें वाले प्रदूषक जैसे– मल–जल, रसायन व उर्वरको का झीलों में पहुँचने से जल प्रदूषित हो रहा है। झीलों के आस–पास बसी आबादी खाद्यान्न उत्पादन के लिये खेती–बाडी भी करती है और उनमें विभिन्न प्रकार के रसायनिक उर्वरको, कीटनाशकों का छिड़काव करते है। वर्षाकाल के समय ये सभी रसायन बहते जल के साथ बहकर आस–पास स्थित झीलों में मिल जाते है चूंकि झीलों का जल नदियों की तुलना मे अधिक स्थिर होता है और अधिकांश नदियों का जल गतिशील होता है। अतः झीलों या तालाबों में यदि किसी एक तत्व का सान्द्रण अधिक हो जाता है तो उस झील या तालाब का पानी हानिकारक बन जाता है। खेतों से विभिन्न अजैविक पोषक तत्व अर्थात रासायनिक तत्वों का धरातलीय वाही जल, सरिताओं, नालों, नदियों आदि के द्वारा भारी मात्रा में प्रतिवर्ष झीलों में विसर्जित कर दिया जाता है तथा सीवेज शोधन संयंत्रो द्वारा भी भारी मात्रा में फास्फेट, नाइट्रेट तथा जैविक पदार्थो को झीलों में डालते रहते है। झीलों में इस तरह के पोषक तत्वों में वृद्धि होने से झीलों में जलीय पौधो तथा जलीय जन्तुओं की संख्या में निरन्तर वृद्धि होती है और इस प्रक्रिया को न्यूट्रीफिकेशन कहते है। इसके विपरित यदि झीलों मे विषाक्त रसायनों की भरमार होती है तो झील में स्थित जीवों की मृत्यु हो जाती है तथा इनकी (जलचरों) संख्या में निरन्तर कमी होने लगती है और झीलों के परिस्थितिकीय तंत्र में असंतुलन उत्पन्न हो जाता है।

भूमिगत जल प्रदूषण – भूमिगत जल का प्रदूषण कई प्रकार के स्त्रोतों से होता है जैसे– कृषि क्षेत्रों में प्रदूषकों के भूमि में रिसने से औद्योगिक संस्थानों से निकलने वालें अपशिष्ट पदार्थो की डम्पिग से, ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रो से निकलने वालें कचरें से प्रदूषित से तथा बावड़ियों से। जिन क्षेत्रों में सामान्य से उच्च वार्षिक वर्षा होती है वहाँ पर वर्षा के जल का भूमि मे अधिक अन्तः स्पन्दन होता है और वर्षा के जल के साथ–साथ प्रदूषकों का भी गमन धरती के अन्दर होता है और जिस कारण भूमिगत जल का प्रदूषण भी अधिक होता है। खेतो में कृषि कार्य के दौरान फसलों को रोगों से बचाने के लिये खरपतवार नष्ट करने तथा उत्पादकता को बढाने के लिये विभिन्न प्रकार के रसायनो, उर्वरका व कीटनाशकों का प्रयोंग किया जाता है। इनका छिड़काव फसलों पर कर देने से फसलो में रोग व कीड़े नही लगतें है ऐसा करके फसलो को तो बचा लिया जाता है लेकिन ये रसायन वर्षा जल के साथ या सिंचाई के द्वारा लगने वाले जल के साथ घुल जाते है और धीरे–धीरे जमीन के अन्दर रिसने लगते है रिसते हुये ये भूमिगत जल में मिल जाते है और उसे प्रदूषित करते हैं। रिसते जल के साथ सतह के नीचे गमन करने वाले प्रदूषकों को निक्षालक कहते है। इन प्रदूषकों का सतह के नीचे की ओर 400 मीटर की गहराई तक प्रवेश हो जाता है।

जल प्रदूषण के प्रतिकूल प्रभावः–

जल प्रदूषण के प्रतिकूल प्रभावों का सामना पौधो एवं मानव सहित समस्त जन्तु समुदाय को करना पड़ता है जिसका अकथनीय एवं असाध्य परिणाम प्राप्त हो सकते है। जल प्रदूषण का सर्वाधिक प्रभाव मनुष्य तथा छोटे–छोटे जीव–जन्तुओं पर पड़ता है। इसके कतिपय प्रभाव निम्न है–

1. प्रदूषित जल के कारण कई प्रकार के संक्रामक तथा खतरनाक रोग उत्पन्न हो जाते है जैसे– हैजा, तपेदिक, पीलिया, अतिसाद, मियादी ज्वर, पेराटाइफाइड, पेचिस आदि का आविर्भाव होता है।
2. ठोस प्रदूषकों से प्रदूषित जल पीने से कई प्राण घातक रोग उत्पन्न हो सकते है।
3. जिस जल में विषाक्त रसायन प्रवेश कर जाते है वह जल इतना अधिक प्रदूषित हो जाता है कि उसमें पनपे पौधे तथा रहने वाले जीव–जन्तुओं की मृत्यु हो जाती है।
4. दूषित नदियों, झीलों तथा तालाबों से सिंचाई करने पर फसलें नष्ट हो जाती है।
5. अत्यधिक प्रदूषित जल के कारण मिट्टियों की उर्वरा शक्ति कम हो जाती है तथा मृदा प्रदूषण बढ़ जाता है।
6. अत्यधिक लवणता वाले जल से सिंचाई करने पर मिट्टियों में क्षारीयता बढ जाती है।
7. सागरों में जल प्रदूषण बढनें से सागरों का पारिस्थितिकीय तंत्र में असंतुलन बढ जाता है।

मृदा प्रदूषण :–

पौधो, फसलों व पेड़ो के विकास के लिये जितनी आवश्यकता पानी और प्रकाश की है उतनी ही आवश्यकता मिट्टी की भी पड़ती है। मिट्टी ही एक पौधे के खड़ा होने के लिये आधार प्रदान करती है। अतः पेड़–पौधो के जीवन के लिये मिट्टी की भी उतनी ही आवश्यकता है जितनी कि जल की है। मृदा या मिट्टी धरातल पर मिलने वाले असंगठित पदार्थो की ऊपरी परत है जो मूल चट्टान तथ वनस्पतियों के योग से बनती है।

डोकुचादेव के अनुसार –

ये एक रूसी मृदाशास्त्री हैं जिनके अनुसार– ''मिट्टी मात्र शैलो, पर्यावरण, जीवों एवं समय की पारस्परिक क्रिया–प्रतिक्रियाओं का परिणाम है।''

बुशनेल के अनुसार – ''मिट्टी भूपृष्ठ के ऊपरी भाग का प्राकृतिक अंग है जिसकी परते भू–सतह के सामानान्तर विभिन्न समयों और विविध दशाओं में भौतिक, रासायनिक तथा जैविकीय प्रक्रियाओं द्वारा पैतृक–शैलो से प्राप्त पदार्थ में परिमार्जन के परिणामस्वरूप निर्मित होती हैं।''

अतः मिट्टी एक ऐसा पदार्थ है जिसमें पौधे पानी व विभिन्न खनिज तत्वों को पोषण के रूप में ग्रहण करते है तथा अपने

जीवन का विकास करते है। मिट्टी का निर्माण अनेक शैलो के टुटने–फुटने से होता है। मिट्टी के निर्माण में मुख्यतः अपक्षय व अपरदन की प्रक्रिया महत्वपूर्ण होती है जिस पर तापमान के कम या अधिक होने का प्रभाव पडता है। विभिन्न प्रकार के मानव जनित स्त्रोतो से तथा प्राकृतिक स्त्रोतों से मिट्टियों की गुणवता में होने वाले ह्रास को मृदा प्रदूषण कहते हैं। मनुष्य द्वारा काम में लिये जाने वाले विभिन्न प्रकार के रसायनों व उर्वरकों से भूमि प्रदूषण इतना अधिक फैल गया है कि कही–कही तो मृदा में पौधे तक जीवित नही रहते है। जमीन से निकलने के कुछ दिनो बाद की वे नष्ट हो जाते है। मृदा की गुणवता में ह्रास या अवनयन निम्न करणो से होता हैः–

1. तीव्र गति से होने वाले मृदा अपरदन के द्वारा।
2. मिट्टियों में रहने वाले सूक्ष्म जीवों में कमी से।
3. मिट्टियों में नमी का या तो आवश्यकता से अधिक होना या बहुत कम होना।
4. तापमान में अत्यधिक उतार–चढाव होने से।
5. मिट्टियों में ह्यूमस की मात्रा में कमी होने से।
6. मिट्टियों में विभिन्न प्रकार के प्रदूषकों का प्रवेश एवं सान्द्रण बढने से।

अतः मिट्टी में विभिन्न प्रकार के तत्वों जैसे– लवण, खनिज तत्व, कार्बनिक पदार्थ, गैसे एवं जल का एक निश्चित अनुपात होता है यदि मिट्टी में इन पदार्थो या तत्वों की मात्रा एवं अनुपात में विभिन्न कारणों द्वारा परिवर्तन उत्पन्न हो जाता है तो उसे मृदा प्रदूषण कहते है। वर्तमान समय में मनुष्य मिट्टी से अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिये तथा उसकी उर्वरता बढ़ाने के लिये मिट्टी में विभिन्न प्रकार के रासायनिक उर्वरको व खादों का प्रयोग करता है तथा कृषि कार्य के दौरान फसलो को कीटों व रोगो से बचाने के लिये फसलों पर कीटनाशकों तथा रोगनाशकों का छिड़काव करता रहता है ये सभी पदार्थ गैस, द्रव या ठोस रूप में मिलते है। इनमें से ज्यादातर पदार्थ मिट्टी में मिलकर भूमि प्रदूषण उत्पन्न करके मिट्टी की उर्वरा शक्ति में कमी लाते है।

मृदा प्रदूषण के कारक – मृदा प्रदूषण के लिये निम्न कारक उतरदायी हैः–

1. भूमि उपयोग में व्यापक परिवर्तन के कारण मिट्टियो का तीव्र गति से अपरदन।
2. विभिन्न रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशी, रोगनाशी तथा शाकनाशी कृत्रिम रसायनों का अत्यधिक प्रयोग।
3. औद्योगिक एवं नगरीय क्षेत्रो के प्रदूषित अपशिष्ट जल का सिंचाई के रूप में प्रयोग।
4. हानिकारक सूक्ष्म जीव।
5. वनों में आग लगना।
6. औद्योगिक एवं नगरीय क्षेत्रों के अपशिष्ट ठोस पदार्थो की डम्पिंग से।
7. जलभराव तथा उससे सम्बन्धित केशिका क्रिया द्वारा।
8. सूखा आदि।

मृदा प्रदूषण के स्त्रोत – मृदा प्रदूषण के स्त्रोंतो को निम्न 4 वर्गो में विभाजित किया जा सकता हैं जैसेः–

1. भौतिक कारक (स्त्रोत)
2. वायुजात कारक
3. जीवनाशी तथा रासायनिक उर्वरक
4. नगरीय व औद्योगिक स्त्रोत।

रासायनिक उर्वरक तथा जैवनाशी रसायनः– आधुनिक समय में विभिन्न उर्वरक तथा रसायन आधुनिक कृषि के आवश्यक अंग बन चुके है। यद्यपि एक तथ्य यह भी है कि इनका यदि सीमित उपयोग किया जाये तो ये फसलों को आवश्यक पोषक तत्व भी प्रदान करते है लेकिन अत्यधिक मात्रा में प्रयोग के कारण मिट्टियों के भौतिक एवं रासायनिक गुणों में भारी परिवर्तन हो जाते है। इनमें सर्वाधिक खतरनाक रसायन प्रदूषक विभिन्न प्रकार के जैवनाशी रसायन है जैसे कीटनाशी, रोगनाशी तथा शाकनाशी जिनके अधिक इस्तेमाल से बैक्टिरिया सहित सूक्ष्म जीव नष्ट हो जाते है। जिस कारण मिट्टियों की गुणवता में भारी कमी आ जाती है। वास्तव में जैव रसायनो व उर्वरकों के उपयोग में तेजी से हो रही है वृद्धि का प्रमुख कारण मानव जनसंख्या में तेजी से वृद्धि एवं कृषि का व्यवसायिकरण है। भारत में इन जैव रसायनों का प्रयोग 1960 के बाद हरित क्रांति के साथ प्रारम्भ हुआ था। एक अनुमान के अनुसार भारत में प्रतिवर्ष 1,00,000 टन जैवनाशी रसायनों का प्रयोग होता है। भारत में 1955 में 2350 टन जैवनाशी रसायनों का उत्पादन हुआ था जो 1983 में बढकर 1,49,795 टन हो गया था। अतः इन 23 वर्षो में इन रसायनों के उत्पादन में 63 गुनी वृद्धि हुई हैं। ये विभिन्न रसायन विशेष रूप से आहार श्रृंखला में प्रवेश करते है और मनुष्यों व जन्तुओं में आहार के माध्यम से प्रविष्ट हो जाते हैं ये रसायन सर्वप्रथम मिट्टियों में उपस्थित कीटाणुओं तथा अवांछित पौधो को नष्ट करते है उसके बाद मिट्टियों की गुणवता को कम करते है। जैवनाशी रसायनों को रेगंती मृत्यु कहा जाता है।

आधुनिक समय में विभिन्न प्रकार के जैव रसायनों का प्रयोग किया जाता है जैसेः–

आरगैनिक फास्फेट कम्पाउण्ड

जैसे मलेथिऑन्स– इस प्रकार के रसायनों के अधिक प्रयोग से मिट्टियों में एसीटाइक्लोरीन की अधिकता हो जाती है जिससे मिट्टियों की उर्वरा शक्ति कम हो जाती है।

क्लोरीनेटेड हाइड्रोकार्बन्स जैसे डी.डी.टी, डाइएल्ड्रिन, एल्ड्रिन आदि। इन कीटनाशी रसायनों का प्रयोग मुख्यतः कीटो तथा सूक्ष्य जीवों को मारने के लिये जाता है। प्रारम्भ में डी.डी.टी. का उपयोग मानव स्वास्थ्य के लिये वरदान था क्योंकि इससे विभिन्न प्रकार के रोगवाहक कीटों तथा कीटाणुओं का आसानी से विनाश सम्भव था लाखों लोगो को मलेरिया, मियादी ज्वर आदि रोगो से बचा लिया गया था। 1971 तक इसका प्रयोग बिना किसी शंका से हो रहा था लेकिन 1972 के बाद इसके प्रयोग पर रोक लगा दी गई है हालांकि भारत में इसका उपयोग आज भी जारी है यह एक जहरीला कृत्रिम रसायन है। इसका एक बार प्रयोग करने से ही मिट्टी में इसका अंश 20–25 वर्षो तक रहता है।

आर्सेनिक युक्त कीटनाशी तथा सोडियम फ्लूओरोएसीटेटसः–

उद्योगों, कारखानों व नगरीय क्षेत्रों से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थो को खेतों में छोडने तथा नगरों व शहरों से निकलने वालें गन्दे नालों के सीवेज जल से फसलों की सिंचाई के कारण मिट्टियों के भौतिक एवं रासायनिक गुणो में परिवर्तन हो जाने से मिट्टियों का अवनयन प्रारम्भ हो जाता है।

कृषि कारको का मृदा पर प्रभावः–

कृषि पैदावार बढ़ाने के लिए अनेक प्रकार के फर्टिलाइजर्स एवं घातक रसायनों का प्रयोग किया जाता है। ये रासायन मृदा की लवणता में वृद्धि करते है जिससे मृदा का स्वास्थ्य बिगड़ रहा है। जब मृदा लवणों से प्रभावित होती है तो उसकी उपजाऊ क्षमता घट जाती है। जिससे उसमें उगने वाले पौधें अपना विकास अच्छी तरह से नहीं कर पाते है। लवणीय मृदाओं में फसले उगाने पर बीजों का अकुंरण ठीक ढंग से नही हो पाता है। मृदा के लवणीय होने पर पौधों की कोशिकाओं से पानी और जीवद्रव्य वापस मृदा विलयन में आने लगता है तो पौधे मुरझाने लगते है

व मर जाते है। अतः पौधों को जड़ो द्वारा जल तथा पोषक तत्वों का आवश्यक मात्रा में अवशोषण नहीं कर पाने से नमी विद्यमान होते हुए भी पौधें नमी का अभाव महसूस करते है। रसायनों की उपस्थिति के आधार पर मृदा को तीन वर्गो में बांटा गया हैः–

1. **लवणीय मृदा**– इस मृदा में Ca, डहए छं तथा झके घुलनशील लवण पाये जाते है जो भूमि को सफेद परत के रूप में ढ़क लेते है। इस मृदा को सोलन–चाक, रेह, कल्लर या ऊसर भी कहते है।
2. **लवणीय क्षारीय मृदायेः**– इस मृदा में सोडियम लवणों की प्रचूर मात्रा होने के कारण मृदा की भौतिक स्थिति अच्छी नहीं रहती है। इस मृदा में कठोर कंकड़ो की परत पायी जाती है जिसके कारण जल एवं वायु का संचार नीचे तक नहीं हो पाता है जिसे मृदा चिपचिपी बन जाती है इस मृदा को काली ऊसर व सोलोनेट्ज के नाम से भी जाना जाता है।
3. **अलवणीय क्षारीय मृदायें**:– इस मृदा में भी सोडियम लवणों की मात्रा अधिक होती है अतः मृदा की भौतिक दशा विकृत हो जाती है इसे ऊसर भूमि भी कहते है।

मृदा के उपरोक्त वर्गीकरण को निम्न प्रकार सारणीबद्ध किया जा सकता हैः–

मृदा का प्रकार	विधुत चालकाता (ds/m) (25^0c- ताप पर)	विनिमयशील सोडियम लवण	pH मान
1. लवणीय मृदा	4 से अधिक	15 से कम	8.5 से कम
2. लवणीय क्षारीय मृदा	4 से अधिक	15 से अधिक	8.5 से अधिक
3. अलवणीय क्षारीय मृदा	4 से कम	15 से अधिक	8.5 से अधिक

ds/m =डेसीसाइमेस प्रति मीटर

इस प्रकार कृषि कारको द्वारा होने वाले मृदा प्रदूषण के निम्नलिखित कुप्रभाव होते है–

1. विभिन्न स्त्रोतो से होने वाले मृदा प्रदूषण के कारण मनुष्य एवं जैव समुदाय पर दूरगामी प्रभाव पड़ते है।
2. इस प्रदूषण के कारण मिट्टियों की गुणवता में कमी होने से मिट्टी की उर्वरता भी घट जाती है और उर्वरा शक्ति में कमी आने के कारण कृषि उत्पादन में कमी आने लगती है।
3. मृदा प्रदूषण के कारण कभी–कभी मिट्टियाँ इतनी अधिक प्रदूषित हो जाती है किवे कृषि कार्यो के लिये अनुयुक्त हो जाती है।
4. अवनलिका अपरदन के कारण मिट्टियों का अपरदन इतना अधिक हो जाता है कि समस्त प्रभावित भूमि बीहड़ भूमि में परिवर्तित हो जाती है और समस्त भाग उत्खात स्थलाकृति के कारण बंजर भूमि में बदल जाती है अतः मृदा प्रदूषण के कारण बंजर भूमि के प्रतिशत में वृद्धि हो जाती है।
5. रासायनिक उर्वरक तथा विभिन्न जैवनाशी रसायन (जैसे– कीटनाशी, रोगनाशी तथा शाकनाशी) के प्रदूषक मिट्टियों के द्वारा आहार श्रृंखला के माध्यम से मनुष्य एवं जन्तुओं के शरीर में पहुँचकर विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न करते है। जिससे प्रतिवर्ष अनेक लोगो व जीव–जन्तुओं की मृत्यु हो जाती है। एक अनुमान के अनुसार इन रसायनों के प्रयोग से विश्व में प्रतिवर्ष 5,00,000 व्यक्तियों की मृत्यु हो जाती है।
6. अत्यधिक मात्रा में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करने से खाद्यान्नों की गुणवता प्रभावित होती है। ये खाने में स्वादिष्ट नही होते है। पोषक तत्वों की कमी हो जाती है।

मृदा प्रदूषण का नियन्त्रणः–

मृदा प्रदूषण पर नियन्त्रण पाना न केवल वांछनीय है अपितु अनिवार्य भी है क्योकि समस्त जैव जगत व मानव समुदाय का आहार मिट्टी पर ही निर्भर करता है। अतः मृदा प्रदूषण को नियंत्रित करने का प्रयास हर व्यक्ति को करना चाहिये। इसे नियंत्रित करने के लिये निम्न उपायों का सुझाव दिया जा सकता है–

1. विभिन्न प्रकार के रासायनिक उर्वरकों तथा जैवनाशी कृत्रिम रसायनों का नियंत्रित तथा विवेकपूर्ण उपयोग करना चाहिए।
2. इस प्रकार के कीटनाशी रसायनों का विकास किया जाना चाहिये जो मानव समाज के लिये हानिकारक ना हो।
3. डी.डी.टी. के प्रयोग पर तुरन्त रोक लगा देनी चाहिए। प्रारम्भ में इसका प्रयोग मानव समुदाय के लिये लाभदायक था। लेकिन अब इस पर कई देशो में रोक लगा दी गई है।
4. नगरों एवं कारखानों से निकलने वाले मलजल का फसलों में सिंचाई के लिये प्रयोग उसके शोधन के बाद ही किया जाना चाहिए।
5. भूमि उपयोग की उचित विधियों तथा उचित फसल प्रबन्धन किया जाना चाहिए।
6. रासायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशकों के समुचित उपयोग के लिये किसानों को शिक्षित किया जाना चाहिए।
7. रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर कम्पोस्ट तथा हरी खाद के प्रयोग को वरीयता प्रदान की जानी चाहिए।
8. क्षारीय भूमि को वैज्ञानिक ढंग से शोधित किया जायें। जिप्सम, सिंचाई तथा रासायनिक खादो को प्रयोग करके क्षारीय मिट्टी को भी उर्वर बनाया जा सकता है।
9. सिंचाई और उर्वरकों का प्रयोग करने के पहले मिट्टी व पानी की जाँच करा लेनी चाहिए।
10. खेतो में पानी के निकास की सही व्यवस्था की जाये।
11. स्थानान्तरण कृषि या झूमिंग कृषि पर रोक लगाई जायें।
12. खेतो के किनारों व ढालू भूमि पर वृक्षारोपण किया जाना चाहिए।
13. खेतों में पेड़–पोधों की पत्तियों, छाले, छिलके, जडे, तने, डंठल आदि सड़ाये जाने चाहिये न कि उन्हे जलाना चाहिए।
14. मृदा अपरदन को रोकने के उपायों को एक साथ अपनाया जाना चाहिये।

निष्कर्षः–

तीव्र जनसंख्या विस्फोट की वजह से खाद्यान्नों की कमी को रोकने के लिए कृषि में रासायनिक उर्वरको का उपयोग करके अन्न उत्पादन को बढ़ाने पर बल दिया गया। चूँकि उर्वरक जहरीले होते हैं अतः इनके अत्यधिक इस्तेमाल से मृदा के स्वास्थ्य में गिरावट आ रही है फलस्वरूप किसानों द्वारा खेती में कीये जाने वाले व्यय की लागत राशि भी बढ़ रही है। अधिक उत्पादन के लालच में हम विनाशकारी रसायनो का इस्तेमाल करके खाद्यानो की पैदावार बढ़ाने में तो सक्षम हुए है लेकिन साथ ही जल, वायु, मृदा तथा ध्वनि प्रदूषण को बढ़ाकर अपने चारो ओर उपस्थित पर्यावरण को अशांत कर दिया हैं। जिससे मृदा की संरचना, वायु के संचरण की गति तथा मृदा में विराजमान खनिज तत्वो का ह्रास हो रहा हैं। खनिज तत्वो की कमी से जूझ रही मृदा में उत्पन होने वाला अनाज पौष्टिक दृष्टि से कमजोर होता हैं। अतः ऐसे अनाज को ग्रहण करने पर शरीर के लिए आवश्यक पौषक तत्वो की आपूर्ति मानव को नही हो पाती हैं। फलस्वरूप हमारा शरीर कमजोर होता जा रहा है तथा

उसकी रोगाणुओं से लड़ने की सामर्थ्य क्षीण होती जा रही हैं। खाद्यान्नो के उत्पादन में कमी का एक अन्य महत्वपूर्ण कारक प्राणघातक फर्टिलाइजर्स के उपयोग के साथ साथ प्रकृति द्वारा उपलब्ध कराये गये संसाधनों का अंधाधुंध दोहन भी है। इनका प्रतिकूल प्रभाव मृदीय सूक्ष्म जीवाणुओं तथा कृषक मित्र केचुओं के जीवन पर पड़ रहा हैं। तथा इनकी संख्या लगातार घट रही हैं। केचुओं को कृषक मित्र इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह मृदा की उत्पादकता को बढ़ाता हैं। अतः किसानो के लिए यह चिन्तनीय विषय है कि कृषक मित्र केचुओं की घटती संख्या को कैसे रोका जाए ताकि मृदा के उपजाउपन के साथ साथ कृषि पारिस्थितिकी की प्रभावशीलता को बनाये रखा जा सके। ताकि प्राकृतिक संसाधनों को किसी प्रकार की क्षति ना पहुँचे।

अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि पर्यावरण को प्रदूषित करने में अन्य कारकों का जितना योगदान है उतना ही योगदान कृषि विकास का भी रहा हैं। कृषि जनित स्त्रोतो से भी वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण तथा भूमि प्रदूषण में वृद्धि होती है। आधुनिक तकनिकी के विकास के कारण ही आज अधिकांश कृषि कार्य मानव के द्वारा ना होकर मशीनों व आधुनिक उपकरणों के द्वारा किया जाता है। मशीनों का प्रयोग बढने के कारण एक ओर तो मानव से रोजगार छिनता जा रहा है तो दूसरी ओर इन मशीनों से पर्यावरण प्रदूषण में भी वृद्धि हो रही है। अतःस्पष्ट है कि कृषि विकास का मानव स्वास्थ्य व पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है।

संदर्भ सूची

1. Bhalla GS, Gurmail Singh. Indian Agriculture: Four Deacades of Development, Sage Publication, New Delhi, 2000.
2. Bhatia A, Bhatia H. Introductive Bio-Environment, Rajasthan Hindi Granth Akadmi, Jaipur, 2000.
3. Bhattacharya AK. “Sprinkler Irrigation and its Uses and Limitations.” Short-Item course on Sprinkler and Drip Irrigation. WAPCOS, New Delhi, 1985.
4. Black, Magic. A Matter of Life and Health, OUP, New Delhi, 2004.
5. Black, Magic, The No-Nonsense Guide to Water, Rewat Publications, Jaipur, 2005.
6. Government of India. Census of India 2001, Provisional Population Totals, Paper 1 of 201, Series, Director of Census Operation, Haryana, 2001.
7. Goyal MM. Importance of Environmental conservation, Anupriya publishers House, Jaipur, 2001.
8. Ground-Water Directorate, Karnal. Ground-Water potential of Haryana (First approximation), 1973, Technical Report No. 115.
9. Gupta AK. “Sprinkler Irrigation” Short-term course on Sprinkler and Drip Irrigation. WAPOS, New Delhi, 1985.
10. Gupta LC, Gupta MC. Haryana: On Roads to Modernization, Excel Books, New Delhi, 2000.
11. Gupta NS, Amarjit Singh. Igricultural Development of States in India, Vol. I, Seema Publications, New Delhi, 1975.
12. Gupta SP. Agricultural Development in Haryana, Agricole Pub. Acad., New Delhi, 1984.
13. Gurjar RK, *et al*. Environmental Geography Panchshil Prakashan, Jaipur, 2001.
14. Gurjar RK, *et al*. Natural Hazards Surbhi Prakashan, Jaipur, 2001.
15. Gurjar RK, *et al*. Resource and Environment, Panchshil Prakashan, Jaipur, 2002.
16. Gurjar RK, *et al*. Resource Geography Panchshil Prakashan, Jaipur, 2004.
17. Haryana State Minor Irrigation (Tubewells) Corporation Ltd; Karnal, Ground-water map of Haryana, 1972.
18. Hazard Management Centre, Rajasthan State Public Administratie Institute, Jaipur, 2007.
19. Gurjar RK. “Irrigation Impact on Desert Ecology, Printwell, Jaipur, 1992.